

ऋषि विश्वामित्र विद्या फाउंडेशन

प्रस्तुतकर्ता: आचार्य कपिल | सम्पर्क: 8756390767

ऋग्वेद मन्त्र १.२.४ - इन्द्र और वायु का आह्वान

मूल मन्त्र

इन्द्रवायू इमे सुता उप प्रयोभिरा गतं ।

इन्द्रवो वामुशन्ति हि ॥४॥

पदपाठः इन्द्रवायू इति । इमे । सुताः । उप । प्रयोऽभिः । आ । गतम् ।
इन्द्रवः । वाम् । उशन्ति । हि ॥४॥

शब्दार्थ (Word Meanings)

पद (Word)	अर्थ (Meaning)
इन्द्रवायू (इन्द्रवायू इति)	हे इन्द्र और वायु देव! (परम्परागत) / हे प्रत्यक्ष सूर्य और पवन! (वैज्ञानिक)
इमे	ये
सुताः	अभिषुत (निचोड़े हुए) सोमरस / उत्पन्न हुए प्रत्यक्ष पदार्थ
उप	समीप
प्रयोभिः (प्रयोऽभिः)	तृप्त करने वाले अन्न के साथ
आ गतम्	आइए / प्राप्त होते हैं (आगच्छतम्)
इन्द्रवः	सोम की बूंदें / जल, यज्ञमय क्रियाएँ तथा प्राप्तव्य भोग
वाम्	आप दोनों को
उशन्ति	कामना करते हैं / प्रकाशित करते हैं
हि	क्योंकि / यस्मात्

मन्त्र विनियोग (Ritual Application)

आचार्य सायण के अनुसार:

इस ऋचा का उपयोग सोमयाग में होता है। सायण भाष्य में प्रमाण है—

"एतस्या ऋच ऐन्द्रवायवग्रहे द्वितीयपुरोनुवाक्यारूपेण विशेषविनियोगः पूर्वमेवोक्तः ।"

अर्थात्, यज्ञ में 'ऐन्द्रवायव ग्रह' (इन्द्र और वायु देवता के निमित्त सोमरस का पात्र) के ग्रहण के समय इस मन्त्र का द्वितीय पुरोनुवाक्य (हवन से पूर्व पढ़े जाने वाले मन्त्र) के रूप में विशेष विनियोग किया जाता है।

मन्त्र भाष्य एवं भावार्थ

१. परम्परागत / आचार्य सायण भाष्य (Ritualistic Meaning)

हे इन्द्र और वायु देव! आपके लिए ये सोमरस निचोड़े गए हैं (तैयार किए गए हैं)। अतः आप अस्मभ्यं (हमें) देने योग्य तृप्तिकर अन्नों के साथ हमारे समीप आइए। चूँकि ये सोम की बूंदें आप दोनों की ही कामना करती हैं, इसलिए आपका हमारे यज्ञ में आगमन अत्यन्त उचित है।

२. वैज्ञानिक / महर्षि दयानन्द भाष्य (Scientific/Physical Approach)

यहाँ **इन्द्र का अर्थ सूर्य है** (जो अपनी आकर्षण शक्ति से लोकों को धारण करता है और जल का वाष्पीकरण करता है) तथा **वायु का अर्थ प्रत्यक्ष पवन है**।

(प्रमाण: ऐतरेय ब्राह्मण ६.१० 'इन्द्रो वै त्वष्टा', ऋग्वेद ८.१४.९, ३.३०.५ - सूर्य रूपी इन्द्र अपनी गुरुत्वाकर्षण शक्ति से पृथ्वी आदि लोकों को अपनी कक्षा में स्थिर रखता है और मेघों का भेदन करता है)।

भावार्थ: प्रत्यक्ष सूर्य और पवन, ये दोनों भौतिक तत्त्व जगत के रक्षक हैं। जगत में उत्पन्न हुए प्रत्यक्ष पदार्थ और तृप्तिकर अन्नादि इन्हीं के प्रभाव से परिपक्व होकर प्राणियों के समीप आते हैं। जल, यज्ञमय क्रियाएँ और सम्पूर्ण भोग्य पदार्थ सूर्य और वायु के ही अधीन हैं और वे इन्हीं के द्वारा प्रकाशित व संचालित होते हैं। सूर्य अपनी आकर्षण शक्ति से जलों (इन्द्रवः) को ऊपर खींचता है और वायु उन्हें वृष्टि के रूप में अन्नादि (प्रयोभिः) की उत्पत्ति के लिए नीचे लाता है।

व्याकरण और पद-सिद्धि (Grammar Derivation)

इन्द्रवायू

आमन्त्रित (सम्बोधन) होने के कारण इसके आदि स्वर में उदात्त (आमन्त्रितादुदात्तत्वम्) है ।

प्रयोभिः

भोक्ताओं को जो तृप्त करे, वह अन्न (प्रयस) है । 'प्रीञ् तर्पणे कान्तौ च' धातु (णिच् अर्थ में) से औणादिक 'असुन्' प्रत्यय होकर सिद्ध होता है । यह नित्स्वर है ।

आ गतम्

'गम्' (गमि) धातु से लोट् लकार, मध्यम पुरुष, द्विवचन । 'बहुलं छन्दसि' (पा. सू. २.४.७३) से शप् प्रत्यय का लुक् होता है और 'अनुदात्तोपदेश...' (पा. सू. ६.४.३७) से मकार का लोप होकर 'गतम्' रूप बनता है ।

इन्दवः

'उन्दी क्लेदने' धातु से 'उन्देरच्चादेः' (उणादि सू. १.१२) द्वारा 'उन्' प्रत्यय होता है । आद्यक्षर को 'इ' कार आदेश होने से 'इन्दु' शब्द बनता है (नित्स्वर) । इन्दु का अर्थ सोम या जल है, क्योंकि जल/सोम का स्वभाव क्लेदन (गीला करना/तर करना) है ।

वाम्

युष्मद् शब्द का रूप है । 'अनुदात्तं सर्वमपादादौ' (पा. सू. ८.१.१८) सूत्र से यह अनुदात्त है ।

उशान्ति

'वश कान्तौ' धातु से । यहाँ निघात स्वर की प्राप्ति थी, परन्तु 'हि च' (पा. सू. ८.१.३४) सूत्र से निघात का प्रतिषेध हो जाने पर प्रत्ययस्वर रहता है । ('हि' निपातस्वर है) ।